जम्मू-कश्मीर का हिन्दी अनुदित रंगकर्म

प्रो. (डॉ.) परमेश्वरी शर्मा

जब हम जम्मू-कश्मीरमें हिन्दी रंगकर्म की बात करते हैं तो इसका तात्पर्य नकेवल हिंदी में लिखित बल्कि कश्मीरी, डोगरी, पंजाबी, उर्दू, बंगला, मराठी,अंग्रेज़ी आदि भाषाओं से हिन्दी में अनूदित नाटक स्वतः ही अध्ययन का विषय बन जाता है जिन्होंने जम्मू-कश्मीर के रगंकर्म को समृद्ध किया है। सम्पूर्णभारत की भांति जम्मू-कश्मीर में भी सुनियोजित रंगमंच से पहले लोक-नाटकोंकी ऐतिहासिक परम्परा रही है। भांड पाथर, जागरण, भगतां, हरण, रासलीला,रामलीला का खूब प्रचलन रहा है क्योंकि इन लोक नाटकों के लिए किसी विशेष रंगमंच या अधिक साज-सज्जा की आवश्यकता नहीं होती। खुले मैदानोंतथा चौराहों पर कलाकार अपनी कला के प्रदर्शन द्वारा लोगों का ध्यानआकर्षित करते आए हैं। इन लोक नाटकों का सम्बन्ध यहां के लोक जीवन,लोगों की रुचि तथा संवेदना से रहा है। जम्मू-कश्मीर के महाराजा रणवीर सिंहके राज्य काल में 'रघुनाथ नाट्य कम्पनी' की स्थापना तो हुई किंतु पूरीतरह यह नाट्य कम्पनी महाराजा प्रताप सिंह के शासन काल में सक्रियहुई। यहां तक कि महाराजा हरि सिंह के मुंडन संस्कार पर मुंबई की पारसी रंग कम्पनी विक्टोरिया को राजा ने यहां बुलाया था। जम्मू के मुबारक मण्डी के ग्रीन हाल में कई दिन नाटकों का प्रदर्शन होता रहा। इन पारसी नाटकों से प्रभावित होकर यहां ऐमेच्योर थियेटर ग्रुप की स्थापना हुई जिसने 'चन्द्रावली','जानकी मंगल', 'रामायण नाटक', 'भीष्म प्रतिज्ञा' आदि नाटकों का मंचनकिया। यही नहीं पारसी रंगमंच के प्रभाव स्वरूप अनेक रंगमंचीय क्लबों की स्थापना हुई जिन्होंने आगा हश्र कश्मीरी, राधेश्याम कथावाचक के अनेक नाटकोंका मंचन किया। धीरे-धीरे रंगकर्मियों की संख्या बढ़ती गई। स्वतंत्रता प्राप्ति सेपूर्व देश

प्रेम की भावना जगाने के लिए 'इप्टा' ने भी कई नाटकों का यहांमंचन किया। 1952 में सुधार समिति के कलाकारों ने सुदामा कौल द्वारालिखित 'कश्मीर हमारा है' नाटक खेला। लगभग सौ प्रस्तुतियाँ इस नाटक की हुईं

हैं।1958 में जम्मू-कश्मीरकला,संस्कृति तथा भाषा अकादमी कीस्थापना ने साहित्य की प्रत्येक विधा के साथ-साथ रंगमंच के क्षेत्र में भीक्रान्ति ला दी। जम्मू-कश्मीर के रंगमंच को समृद्ध बनाने में यहां के नाटककारों, नाट्यनिर्देशकों, जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी,नाट्य संस्थाओं तथा अन्य शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक संगठनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

जम्मू-कश्मीरकला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी प्रदेश के तीनों भागों (जम्मू-कश्मीर व लद्दाख) में भाषा, संस्कृति और कलाओं को समृद्ध बनाने मेंसक्रिय रही है। जम्मू को छोड़कर प्रदेश के बाकी दो हिस्सों में हिन्दी नाटकऔर रंगमंच की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। कश्मीर में 1970-80 का दशक हिन्दी नाटक और रंगमंच के लिए सुनहरा रहा है। इस दौर में अन्य भारतीय भाषाओं के हिन्दी में रूपान्तरित तथा अनुदित महत्वपूर्ण नाटक मंचित होते रहेहैं जैसे मोतीलाल क्यमू के नाटक 'त्रिनाम', 'शाप' तथा 'नगर उदास' । येतीन नाटक मूल रूप से कश्मीरी भाषा में हैं इनका अनुवाद पंडित गौरीशंकररैना ने किया है। यह नाटक लोक नाट्य शैली भांड पत्थर पर आधारित है।इसकेअतिरिक्त'एकओरद्रोणाचार्य','रक्तबीज' (शंकर शेष), 'सन्तोला' (मुद्राराक्षस), 'जुलूस', 'बाकी इतिहास' (बादल सरकार), 'हत्या एकआकार की' (ललित सहगल), 'कोणार्क' (जगदीशचंद्र), 'खामोश अदालत जारी है' (विजय तेंदुलकर) 'नदी प्यासी थी', 'रजनीगंधा' 'पागल कौन', तथा 'गॉदो केइन्तजार में' (सैमुअल बेकेट) आदि नाटकों के सफल प्रदर्शन हुए हैं। किंतु कश्मीर का रंगकर्म 1989 में हुए विस्थापन तथा आतंकवाद की दहशत केकारण थम सा गया। पिछले कई वर्षों से यहां हिन्दी नाटक और

रंगमंच ना केबराबर है। ऐसा नहीं है कि कश्मीर में नाट्य मण्डलियों या निर्देशकों की कमीहै यहां आज भी ऐय्याश आरिफ, अशोक जेलखानी तथा मुश्ताक अली अहमदखां जैसे प्रसिद्ध निर्देशक हैं जो रंगमंच को आगे बढ़ाने के लिए प्रयासरत हैं।रंगकर्मी ऐय्याश आरिफ रंगमंच को कश्मीर के लोगों के लिए अति आवश्यक समझते हैं "उनके अनुसार कश्मीर पर्यटक स्थल है। यहां पूरे हिन्दुस्तान से हीनहीं दुनियां भर के पर्यटक आते हैं। उनके मनोरंजन के लिए यहां कुछ भीनहीं है। यदि कुछेक स्थलों पर नाट्क खेले जाएं तो इन लोगों का मनोरंजन भी होगा और यहां के लोगों के साथ-साथ कलाकारों को भी उनकी खुराकमिल जाएगी"[2]लेकिन विपरीत परिस्थितियों के कारण हिन्दी रंगमंच यहां नहींहो पा रहा है इसका यहां के रंगकर्मियों को दुख भी है।

लद्दाख में महीप उत्सल जैसे 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा' से प्रशिक्षित नाट्यनिर्देशक हैं, जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी की शाखा यहां सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिए प्रयासरत है किन्तु हिन्दी नाटक यहां कोई नहींखेला गया। ऐसा भी नहीं है कि यहां के लोग हिन्दी भाषा समझना या बोलनानहीं जानते। हिन्दी यहां सम्पर्क भाषा के रूप में प्रयोग में लाई जाती है फिरभी हिन्दी नाटकों का मंचन नहीं हो पाता। हां कहीं-कहीं स्कूलों में छुटपुट प्रयास अवश्य होते रहते हैं। लद्दाख केवल चार मास ही देश के बाकी हिस्सों से जुड़ा रहता है। शेष मास यहां भारी बर्फ बारी रहती है। अतः उन चारमहीनों में एक-आध प्रस्तुति तो हो सकती है जबकि ऐसा नहीं हुआ। लद्दाखके लोगों से सम्पर्क करने पर मालूम हुआ कि वे लोग सजग हैं, इच्छुक भी हैं क्योंकि नाटक केवल मनोरंजन ही नहीं करता बल्कि देश दुनिया तथा तत्कालीन समाज की ज्वलन्त समस्याओं से भी रुबरु करवाता है। अकादमी या अन्यनाट्य संस्थाएं यदि हिंदी नाटक करने के लिए आगे आएं तो दर्शकों की कमीनहीं है।मई से लेकर सितम्बर तक पर्यटक भी वहां बहुत होते हैं

जिनकेलिए यदि नाटक जैसा जीवन्त और मनोरंजनकारी उपक्रम आरम्भ किया जाएतो यकीनन सफलता प्राप्त होगी।प्रदेश के कश्मीर तथा लेह की तुलना में जम्मू का रंगकर्म अधिक सक्रियऔर समृद्ध है। यहां बहुत से राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त रंगकर्मी,नाट्य-निर्देशक जैसे कविरत्न, मोती लाल क्यमू, बलवन्त ठाकुर, मुश्ताक काक, कुमार अ. भारती, तपेश्वर दत्ता, दीपक कुमार, सुधीर महाजन, विजय गोस्वामी इफरा काक, सुमित शर्मा, सुतीक्ष्ण कुमार आनन्दम् तथा रजनीश कुमार गुप्तासक्रिय हैं। सभी रंगकर्मी किसी न किसी नाट्य मण्डली तथा नाट्य संस्था से जुड़े हैं जैसे बहुरंगी नाट्य संस्था, नटरंग, आमेच्युर थियेटर ग्रुप, रंग युग,नटराज नाट्य कुंज, थियेटर मित्रा, शिवानी कल्चरल सोसाइटी,समूह नाट्य संस्था, रंगशाला, दा परफार्मर, अजेका, रूपवानी कला मन्दिर, पचंम थियेटर,विराट कल्चरल सोसाइटी, रंगोली प्रोडक्शन, द रिफ्लैक्स प्रतिभा आदि। नाट्यसंस्था 'बहुरंगी' के संस्थापक एन.एस.डी. प्रशिक्षित कविरत्न ने अनेक लोकप्रिय हिन्दी नाटकों का मंचन किया है जिनमें 'खामोश अदालत जारी है', 'आधेअधूरे', 'पंछी ऐसे आते हैं', 'पगला घोड़ा', 'स्पार्टकस', 'कागज की दीवार','थैंक्यू मिस्टर गलाड', 'भूखे भजन न होए', 'रीड की हड्डी', 'शुर्तुमुर्ग', 'बेगमका तकिया' आदि प्रमुख हैं। बलवंत ठाकुर की नाट्य संस्था नटरंग द्वारा मंचित हिन्दी नाटक इस प्रकार हैं-'फंदी', 'पोस्टर', 'रक्तबीज', 'नीली झील', 'सिंहासन खाली है', 'चरणदास चोर', 'कबीर खड़ा बाज़ार में', 'एक था गधा', 'अंधोंका हाथी', 'सईया भये कोतवाल', 'नींद क्यों रात भर नहीं आती', 'मरणोपरान्त' आदि। मुश्ताक़ काक का अमेच्युर थियेटर ग्रुप प्रयोगधर्मीकलाकारों का है जिन्होंने बहुत से हिन्दी के चर्चित नाटकों के साथ-साथ दूसरीभाषाओं के अनुदित नाटकों का भी मंचन किया है । 'अंत हाजिर हो', 'बकरी','प्रतिबिम्ब', 'लोटन', 'धुंध के घेरे', 'आधी रात के बाद', 'अंधेर नगरी', 'अंधा युग' 'दो कोड़ी का खेल', तथा 'डेरियो फो'

केप्रसिद्ध नाटक 'एक्सीडेंटल डैथ' जिसका रूपान्तरण 'एक और दुर्घटना' शीर्षक से अमिताभश्रीवास्तव ने किया, जिसका मंचन अनेक बार हुआ। यह संस्था सिर्फ जम्मू तक ही सीमित नहीं है बल्कि अन्य राज्यों में भी नाट्य प्रदर्शित करती आई है। इनके नाटक देश के अन्य भागों में हो रहे नाट्य महोत्सवों में प्रस्तुत होते हैं।रंगयुग नाट्य संस्था के निर्देशक दीपक कुमार द्वारा मंचित प्रमुख हिन्दी नाटकहैं– 'आधे अधूरे', 'आषाढ़ का एक दिन', 'पोस्टर', 'रक्तबीज', 'एक था गधा','मरणोपरान्त', 'हत्या एक आकार की', 'सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' आदि। इस संस्था ने फ्रेंच भाषा के 'वेटिंग फार गॉदो' कामंचन किया, जिसका हिन्दी में अनुवाद कृष्ण बलदेव वैद ने किया। इस नाट्यसंस्था ने जम्मू में पहली बार 'इन्टीमेट थियेटर' की शुरूआत की थी। रंगयुगके संस्थापक दीपक कुमार के अनुसार इन्टीमेट थियेटर में दर्शकों को मंच परही बिठा दिया जाता है ताकि वे नाट्य कर्मियों की हर हरकत को करीब से देख सकें। 1991 में 'आधे अधूरे' का मंचन इस संस्था ने इसी प्रणाली सेकिया था। 'नटराज नाट्य कुंज' के निर्देशक कुमार अ. भारती ने 'पासपोर्ट', 'कबीरा खड़ा बाज़ार में', 'गुडबाय स्वामी', 'इन्सानियत', 'फंदी' तथा 'अंत हाजिर हो' 'गगन दमामा बाजयो', 'मिस्टर अभिमन्यु, 'सूरज कत्ल नहीं होते' आदि नाटकों का मंचन किया।

सुधीर महाजन की समूह नाट्य संस्था ने 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'डाकघर', 'गुड बाय स्वामी', 'सिंहासन खाली है', 'अंधा युग', 'बाकी इतिहास','तीसवीं शताब्दी', 'एक सौ एकवां कौरव', आदि नाटकों का मंचन किया। इसकेसाथ ही संस्था ने मराठी 'सैया भये कोतवाल' और संस्कृत नाटक 'मत्त विलास' और 'मृच्छकटिकम' का हिन्दी में मंचन किया। यहां के रंगमंच कोआगे बढ़ाने में थियेटर मित्रा ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। संजय कपिल के निर्देशन में इस संस्था ने 'ताजमहल का टेंडर', 'सखा राम

बाइंडर', 'राजा नंगा', 'चौराहा', 'एक ओर एक ग्यारह','देश के लिए', 'बाढ़ का पानी', 'राक्षस' आदि खेले हैं।विक्रम शर्मा की शिवानी कल्चरल सोसाइटी द्वारा 'महासमर', 'एक ओर द्रोणाचार्य', 'बाकी इतिहास', 'अंत नहीं', 'एक सपने कीमौत', 'कलिगुल्ला', 'कहां हो फकीर चन्द', 'महानिर्वाण' तथा अंग्रेजी नाटक औथेलो क सफल मंचन किया गया। रंगमंच को गतिशील बनाए रखने के लिएउक्त सब संस्थाओं, निर्देशकों के प्रयास सराहनीय हैं किन्तु ये संस्थाएँ नाटकके लिए दर्शक नहीं पैदा कर पाईं।

नटरंग के संस्थापक बलवन्त ठाकुर ने जम्मू के रंगकर्म को क्षेत्रीय दायरेसे बाहर निकालकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक ख्याति दिलायी है जो किसी भी राज्यके लिए गौरव का विषय है। इनके निर्देशन में 'नटरंग' नाट्य संस्था कच्ची छावनी, जम्मू में साप्ताहिक नाट्य श्रृंखला के अन्तर्गत हर रविवार को एकनाटक करवाती है। प्रत्येक सप्ताह स्थानीय समाचार पत्रों में इनके नाट्य प्रदर्शन का समाचार छपता है। उसी से ज्ञात होता है कि अमुक नाटक खेला गया। नटरंग के नाट्य प्रदर्शनों में उनके अपने बंधे बंधाये कलाकार लोग तथा मुख्य अतिथि बाहर का कोई आमंत्रित व्यक्ति ही नाट्य-प्रस्तुति में मौजूद रहता है। आजकल सोशल मीडिया पर नाट्य प्रदर्शन की सूचना दे दी जाने लगी है किन्तु यह सूचना भी कम लोगों तक ही पहुंचती है। इस प्रकार के नाट्यप्रदर्शनदर्शक वर्ग से कोसों दूर ही रहते हैं। मर्मज्ञ दर्शकों की कमी भी यहांनहीं है किन्तु निमंत्रण या कहीं इसका प्रचार ही नहीं होता। ऐसे में दर्शक कहां से आएगा। बहुत सी संस्थाएं या तो वार्षिक महोत्सवों में अपनी प्रस्तुतियां देतीं हैं या नाटक मंचन की सूचना समाचार पत्र से प्राप्त करवा देतीं हैं। जोथियेटर ग्रुप मंचन का प्रचार-प्रसार करते हैं, उनके वहां नाट्य प्रेमी दर्शकों कीभीड़ भी देखी गयी है।

जम्मू–कश्मीर में नाटककार तथा निर्देशक दोनों की नाटक को लेकर अवधारणाएं अलग–अलग हैं। कुछ एक वरिष्ठ निर्देशकों का यह मानना है कि यहां के हिन्दी नाटककारों में मौलिकता की कमी है और ऐसे नाटक रंगमंचकी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते जो केवल पाठक को ध्यान में रखकर लिखे गए हों। प्रसिद्ध रंगकर्मी बलवन्त ठाकुर ने अपने साक्षात्कार में प्रखर शब्दों में कहा "कि स्थानीय नाटकों का स्तर नहीं है इसलिए सतही नाटकों का मंचन मैं नहीं कर पाता। उन्हें नाट्य रूपान्तरों, अनूदित नाटकों तथा विदेशी भाषा के नाटक लेने पड़ते हैं।" 3जयशंकर प्रसाद के नाटक रंगमंचको ध्यान में रखकर तो नहीं लिखे गये थे। बहुत कठिन मंचीय व्यवस्था केहोते हुए भी ब.ब. कारन्त ने उनकी कई–कई प्रस्तुतियां की हैं। कुछ कांट–छांटके बाद अन्य कई निर्देशकों ने भी उन्हें खेला है। अतः बिना प्रयास के यहमत बना लेना कहां तक उचित है कि यहां का हिन्दी नाटक स्तरीय नहींहै। यहां मौलिक नाटक उठाने के लिए निर्देशक और रंगकर्मी न तो सार्थकपहल करने को तैयार हैं और न ही परिश्रम। परिणामतः यहां का हिन्दीनाटककार निराशा की स्थिति से गुजर रहा है जबकि हिन्दी नाट्य–लेखन की स्थिति अधिक निराशाजनक भी नहीं है। सब के सब नाटक खराब भी तो नहींहैंकि परिष्कार करके भी खेले नहीं जा सकते।

जम्मू–कश्मीर के नाटककार हिन्दी प्रदेश के नाटककारों की तरह आकर्षक,प्रासंगिक या सम्भावनापूर्ण नाट्कीय विचार–विवेचन में अधिक सक्षम तो नहीं हैंपर वे यहां के हिन्दी नाटक और रंगमंच को समृद्ध बनाने का प्रयास अवश्य कर रहे हैं और भारतीय सामाजिक संदर्भों को अपनी लेखनी से अभिव्यक्ति देने में अपने सामर्थ्य का परिचय देने में लगे हुए हैं। इन नाटककारों नेसमाज की प्रत्येक समस्या जैसे पारिवारिक विघटन, स्त्री–शोषण,दलित–शोषण, वैयक्तिक स्वार्थ से प्रेरित सम्बन्धों में बिखराव की

स्थिति,राजनीति और व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार की नीतियों से अवगत करवानेका यथासम्भव प्रयास किया है। स्वार्थ प्रवृत्ति से प्रभावित व्यक्ति, अर्थ की अंधीदौड़ मेंलगे माता-पिता, नारी की स्वच्छन्द मानसिकता, वैवाहिक जीवन में बढ़ती घुटन और दूरी को डॉ. सुधीर महाजन, सुतीक्ष्ण कुमार आनन्दम् तथाशिवदेव मन्हास के नाटकों में देखा जा सकता है। इन नाटकों में स्त्री शोषणतथा संघर्ष के प्रत्येक पहलू, उसके दुख-दर्द, वर्जनाओं के अनेक स्तरों कोव्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है। ओम गोस्वामी का 'सफेद चील', 'अंधेर नगरी का जालिम गरीब', डॉ. सुधीर महाजन का 'बेटी नहीं चाहिए', 'वो जो खो गया', सुतीक्ष्ण कुमार आनन्दम् का 'हां पिता जी', 'धुंध के घेरे', रजनीशकुमार गुप्ता का 'मेरे अपने' जैसे नाटक उक्त समस्याओं को लेकरलिखे गये हैं। इनमें स्त्री संघर्ष और उसके जीवन की दयनीय स्थिति केसाथ-साथ पितृसत्तात्मक समाज के घिनौने सच से रु-ब-रु करवाने का प्रयासभी किया गया है। इन नाटककारों ने समसामायिक परिवेश में राजनीति तथाव्यवस्था तंत्र के भ्रष्टाचारी तथा षड्यन्त्रकारी रूप को सामने लाया है। छत्रपालके 'तैराक', वरुण सुथरा का 'रास्ते और भी हैं', सुतीक्ष्ण कुमार आनन्दम् के 'मगर यह सच है', 'ताकन लागे काग', 'हां पिता जी' आदि नाटकों में स्वहित में लगी संस्थाओं की पोल खोली गई है। साथ ही इन नाटककारों ने समाजमें हाशिये पर फैंके गये दलितों, शारीरिक व मानसिक रूप से आसामान्यव्यक्ति की पीड़ा को भी उजागर किया है। इस संदर्भ में बलजीत रैणा कानाटक 'एक और प्रेम कथा', रजनीश कुमार गुप्ता के 'कठपुतलियां', 'प्रश्नचिन्ह' तथा वरुण सुथरा का 'हम ऐसे क्यों हैं' आदि नाटक देखे जा सकते हैं। कहनेका अभिप्राय यह है कि यहां के हिन्दी में लिखित नाटकों के कथ्य प्रभावी हैंकिन्तु वर्तमान की अनेक ज्वलन्त समस्याएं जिन के कारण यह राज्य प्रभावित हुआ है, वे नाटकों में दिखाई नहीं देतीं।

विभाजन का दंश इस राज्य ने झेला और आज आज़ादी के लगभग पचहत्तर वर्षों के बाद भी उस दंश की पीड़ाहर घड़ी यहां के लोग झेलते हैं इस पर नाटककारों की दृष्टि नहीं गई।आतंकवाद का मुद्दा भी नाटकों में लगभग नहीं दिखाई देता जबकि ये ऐसीसमस्याएं हैं जो मंच-प्रस्तुति के कारण अधिक प्रभावी साबित हो सकती हैं।मुख्यधारा का हिन्दी नाटक स्वातन्त्र्योत्तर भारत की विसंगतियों को बेनकाबकरने के लिए व्यवस्था से सीधा टक्कर लेता दिखाई देता है जबकि इस प्रदेश का नाटककार इस दृष्टि से पिछड़ा हुआ है।

नाटक में रंगशिल्प की अभिव्यक्ति दो बार होती है। नाटककार की अभिव्यक्ति पाठ्य संरचना के अन्तर्गत आती है जबकि निर्देशक की अभिव्यक्तिरंगमंचीय उपकरण कहलाती है जो कभी-कभी नाटककार की अभिव्यक्ति से कुछभिन्नता लिए भी हो सकती है। यदि हम नाट्यमंचन की बात करें तो पाते हैंकि यहां के निर्देशक विदेशीभाषाओंजैसे अंग्रेज़ी, फ्रैंच, रशियन आदि केहिन्दी रूपान्तरों से काफी प्रभावित हैं। यहां शेक्सपियर्स के 'हेमलेट', 'जुलियससीज़र' , डेरियो फो का 'एक ओर दुर्घटना', ब्रेख्त का 'दो कोड़ी का खेल', सेम्युल बेकेट का 'वेटिंग फॉर गॉदो' आदि की प्रस्तुतियाँ होती रहीं हैं। इसकेअतिरिक्त कश्मीरी, डोगरी, पंजाबी, उर्दू, बंगला, मराठी आदि भारतीय भाषाओं के हिन्दी अनुवादों को भी प्रस्तुत किया जाता है।

एक विडम्बना यह भी है कि यहां के निर्देशक नाटककारों के नाटकों कीअक्सर अनदेखी कर जाते हैं और आसानी से उपलब्ध तथा लोकप्रिय अन्य भाषाओं के नाटकों को प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण यहां के स्थानीय नाटककारों से उसका रिश्ता सहज नहीं हो पाया है। अच्छे, स्तरीय, मंचनीयनाटकों के सृजन के लिए रंगकर्मियों तथा नाटककारों के बीच नियमित, संरचनात्मक संवाद भी एक बहुत बड़ी आवश्यकता है जिसका यहां अभावहै। यदि दोनों पक्षों में इस तरह के संवाद कायम हो सकें तो उन्हें एक-दूसरेकी

दिक्कतों और जरूरतों को समझने में सहायता मिलेगी। नाट्य लेखन के स्तर को बढ़ाने की भी आवश्यकता महसूस होती है। यहां नाट्य लेखन के प्रशिक्षण की आवश्यकता है जिससे यहां के हिन्दी नाटक और रंगमंच का विकास हो सकेगा। दूसरा नाट्य संस्थाओं के निर्देशकों को भी नाट्य मंचन केलिए सरकारी सहायता मिलनी चाहिए क्योंकि बहुत सी ऐसी नाट्य संस्थाएं हैं जो नाट्य मंचन तो करना चाहतीं हैं लेकिन आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वर्ष में केवल एक ही नाटक कर पातीं हैं। जम्मू-कश्मीर अकादमी संस्थाओं को कुछ राशि सहायतार्थ देती है जो बहुत कम है। यहां 'नटरंग' तथा'एकता स्कूल ऑफ ड्रामा' ही ऐसी नाट्य-संस्थाएं हैं जो 'फुल टाईम रिपीटोरी'से अपनी संस्था चला रही हैं, यानि भारत सरकार से उन्हें अनुदान प्राप्त होताहैऔर वर्ष भर नाट्य प्रस्तुतियों के लिए सक्रिय रहतीं हैं। जबकि अन्य संस्थाएं सरकारी अनुदान के अभाव के कारण अधिक सक्रिय नहीं रह पातीं।टिकट प्रणाली नहीं होने के कारण भी संस्थाएँ अधिक मंचन नहीं करतीं। यहभी कहा जाता है कि जम्मू का दर्शक नाटक के प्रति गम्भीर नहीं हैं, पैसेदेकर नाटक देखने वह नहीं आएगा। कुछेक निर्देशक टिकट सिस्टम को अनिवार्यमानते हैं। उनका कहना है कि नाटक-प्रेमी दर्शक इस विधा की जीवन्ततः को समझते हैं अतः वे जरूर आएंगे। यदि नाट्यकला का सही प्रयोग किया जाएतो मीडिया के तकनीकी सौन्दर्य के बावजूद रंगमंच की क्षमता स्वतः सिद्ध हो जाएगी। नाटक की जीवन्तता के समक्ष मीडिया का आकर्षण बेजान अनुभव साबित होगा ऐसा हमारा मानना है।

बहुत से निर्देशकों के साक्षात्कार द्वारा यह बात सामने आई कि हमारे यहांदर्शक नहीं हैं किंतु मेरा मानना है कि वास्तव में हम अभी तक दर्शकों केदिलों में अपनी जगह नहीं बना पाये हैं। दूसरा यहां नाटकों के मंचन काप्रचार सही समय पर नहीं हो पाता है और तीसरा यदि दर्शक किसी तरह

मंचन देखने आ भी जाएं तो मुख्य अतिथि के हॉल में आने से पहले नाटक शुरू ही नहीं होता जिससे ऊबे दर्शक को कईं बार तो प्रस्तुति देखे बिना हीलौटना पड़ता है। निर्देशकों को चाहिए कि वे नाट्य-प्रस्तुति में दर्शकों का पूराध्यान रखें क्योंकि दर्शक अपने-आप पैदा नहीं होता है बल्कि पैदा किया जाताहै।

जम्मू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग ने तीन नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' (2013), 'जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्याई नई' (2014) तथा 'नो मैन्स लैण्ड' (2015) जनरल जोरावर सभागार में करवाये। नाटकों का निर्देशन इफराकाक (जो वर्तमान में विश्वविद्यालय में कल्चरल ऑफिसर के रूप में कार्यरत हैं) ने किया। प्रत्येक प्रस्तुति में करीब पंद्रह सौ दर्शक सभागार में मौजूद थे। सब ने प्रस्तुतियों को सराहा। 'दर्शक नहीं हैं' निर्देशकों का यह कथन इन प्रदर्शनों ने सिरे से नकारा है। अपने प्रर्दशनों में हमने यह भी देखा कि यहांका दर्शक गम्भीर दर्शक है। प्रत्येक प्रस्तुति के बाद हमें यह पूछा जाता था'अगला नाटक कब करवा रहे हो'। अभी हाल ही में 'नागमंडल' नाटक जम्मूविश्वविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा खेला गया जिसमें प्रचुर मात्रा में गम्भीर दर्शक मौजूद रहे। इसी प्रकार प्रत्येक वर्ष जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी नाट्य महोत्सवों का आयोजन करती है जिसमें अलग अलगनाट्य-संस्थाए बेहतरीननाटकों का मंचन करती हैं। अतः जम्मू-कश्मीर मेंहिंदी रंगकर्म का भविष्य उज्ज्वल है।

संदर्भ

1. जितेन्द्र शर्मा, जम्मू में रंगमंचीय परंपरा उद्भव और विकास, हिंदी

शीराजा,1977, अंकः 2-3 पृ. 38

2. साक्षात्कार रंगकर्मी, ऐय्याश आरिफ, 2015

3. साक्षात्कार रंगकर्मी, बलवन्त ठाकुर, 2015

Hindi translated theatre of Jammu and Kashmir

Prof. (Dr.) Parmeshwari Sharma

When we talk about Hindi theatre in Jammu and Kashmir, it means not only the plays written in Hindi but also the plays translated into Hindi from Kashmiri, Dogri, Punjabi, Urdu, Bengali, Marathi, English etc. languages automatically become a subject of study which have enriched the theatre of Jammu and Kashmir. Like the whole of India, Jammu and Kashmir also has a historical tradition of folk dramas before the systematic theatre. Bhaand Pathar, Jagran, Bhagatan, Haran, Raasleela, Ramleela have been very popular because these folk dramas do not require any special stage or much decoration. Artists have been attracting the attention of the people by performing their art in open grounds and squares. These folk dramas have been related to the folk life here, the interest and sentiments of the people. Raghunath Natya Company was established during the reign of Maharaja Ranvir Singh of Jammu and Kashmir but this theatre company became fully active during the reign of Maharaja Pratap Singh. Even on the occasion of Maharaja Hari Singh's tonsure ceremony, the king had called Mumbai's Parsi theatre company Victoria here. Plays were performed for many days in the green hall of Mubarak Mandi of Jammu. Influenced by these Parsi plays, an amateur theatre group was established here which staged plays like 'Chandravali', 'Janaki Mangal', 'Ramayana Natak', 'Bhishma Pratigya' etc. Not only this, as a result of the influence of Parsi theatre, many theatre clubs were established which staged many plays of Agha Hashr Kashmiri, Radheshyam Kathavachak. Gradually, the number of theatre artists increased. Before independence, IPTA also staged many plays here to inculcate the feeling of patriotism. In 1952, the artists of the Sudhar Samiti performed the play 'Kashmir Hamara Hai' written by Sudama Kaul. This play has been presented about a hundred times. The establishment of Jammu and Kashmir Art, Culture and Language Academy in 1958 brought about a revolution in every genre of literature as well as in the field of theatre. Playwrights, theatre directors, Jammu and Kashmir Art, Culture and Language Academy, theatre institutions and other educational and cultural organisations have played an important role in enriching the theatre of Jammu and Kashmir.

Jammu and Kashmir Art, Culture and Language Academy has been active in enriching the language, culture and arts in all the three parts of the state (Jammu and Kashmir and Ladakh). The condition of Hindi drama and theatre is not very good in the other two parts of the state except Jammu. The decade of 1970-80 has been golden for Hindi drama and theatre in Kashmir. During this period, important plays adapted and translated from other Indian languages into Hindi have been staged, such as Motilal Kaymu's plays 'Trinaam', 'Shaap' and 'Nagar Udas'. These three plays are originally in Kashmiri language and have been translated by Pandit Gaurishankar Raina. This play is based on the folk drama style Bhaand Patthar. Apart from this, plays like 'Ekordronacharya', 'Raktbeej' (Shankar Shesh), 'Santola' (Mudrarakshas), 'Juloos', 'Baaki Itihaas' (Badal Sarkar), 'Hatya Ek Aakar Ki' (Lalit Sehgal), 'Konark' (Jagdishchandra), 'Khamosh Adalat Jari Hai' (Vijay Tendulkar), 'Nadi Pyaasi Thi', 'Rajnigandha', 'Pagal Kaun' and 'Godo Ke Intezaar Mein' (Samuel Beckett) have been successfully performed. But the theatre in Kashmir came to a halt due to the displacement in

1989 and the terror of terrorism. For the last several years, Hindi drama and theatre are almost non-existent here. It is not that there is a dearth of theatre groups or directors in Kashmir. Even today, there are famous directors like Ayyash Arif, Ashok Jailkhani and Mushtaq Ali Ahmed Khan who are trying to take theatre forward. Theatre artist Ayyash Arif considers theatre to be very important for the people of Kashmir. According to him, Kashmir is a tourist destination.

Tourists come here not only from all over India but from all over the world. There is nothing here for their entertainment. If plays are performed at some places, then these people will be entertained and along with the people here, the artists will also get their food.2 But due to adverse circumstances, Hindi theatre is not being performed here, which the theatre artists here are also sad about.

In Ladakh, there are theatre directors like Mahip Utsal trained from the National School of Drama, the branch of Jammu-Kashmir Academy of Art, Culture and Languages is making efforts for cultural programs here, but no Hindi play has been performed here. It is also not that the people here do not know how to understand or speak Hindi. Hindi is used as a communication language here, yet Hindi plays are not staged. Yes, there are some sporadic efforts in schools. Ladakh remains connected to the rest of the country only for four months. The rest of the months there is heavy snowfall here. Therefore, one or two performances can be performed in those four months, but this did not happen. On contacting the people of Ladakh, it was found that they are aware and interested too because drama not only entertains but also raises burning issues of the country, the world and the society of that time. It also makes us aware of the problems. If the Academy or other theatre institutions come forward to stage Hindi plays, there is no dearth of audience.

There are many tourists there from May to September for whom if a lively and entertaining initiative like drama is started, then it will surely be successful. The theatre in Jammu is more active and prosperous as compared to Kashmir and Leh of the state. Many national and internationally renowned theatre artists and theatre directors like Kaviratna, Moti Lal Kymu, Balwant Thakur, Mushtaq Kak, Kumar A. Bharti, Tapeshwar Dutta, Deepak Kumar, Sudhir Mahajan, Vijay Goswami, Ifra Kak, Sumit Sharma, Sutikshan Kumar Anandam and Rajneesh Kumar Gupta are active here. All the theatre artists are associated with some theatre group or theatre organization like Bahurangi Theatre Institute, Natarang, Amateur Theatre Group, Rang Yug, Natraj Natya Kunj, Theatre Mitra, Shivani Cultural Society, Samuh Natya Sanstha, Rangshala, Da Performer, Ajeka, Roopwani Kala Mandir, Pancham Theatre, Virat Cultural Society, Rangoli Production, The Reflex Pratibha etc. NSD trained Kaviratna, founder of theatre organization ‘Bahurangi’ has staged many popular Hindi plays, among which ‘Khamosh Adalat Jari Hai’, ‘Aadhe Adhure’, ‘Panchhi Aise Aate Hain’, ‘Pagal Ghoda’, ‘Spartacus’, ‘Kagaz Ki Deewar’, ‘Thank You Mr. Galad’, ‘Bhookhe Bhajan Na Hoye’, ‘Spine’s Haddi’, ‘Shurtumurg’, ‘Begumka Takiya’ etc. are the prominent ones. The Hindi plays staged by Balwant Thakur's theatre organization Natarang are as follows- 'Fandi', 'Poster', 'Raktbeej', 'Neeli Jheel', 'Singhasan Khali Hai', 'Charandas Chor', 'Kabir Khada Bazaar Mein', 'Ek Tha Gadha', 'Andhonka Hathi', 'Saiyya Bhaye Kotwal', 'Why does sleep not come the whole night', 'Post death' etc. Mushtaq Kak's amateur theatre group consists of experimental artists who have staged many popular Hindi plays as well as plays translated from other languages. ‘Ant Haazir Ho’, ‘Bakri’, ‘Pratibimba’, ‘Lotan’, ‘Dhundh Ke Ghere’, ‘Aadhi Raat Ke Baad’, ‘Andher Nagari’, ‘Andha Yug’, ‘Do Kodi Ka Khel’, and Dario Fo’s

famous play ‘Accidental Death’ which was adapted as ‘Ek Aur Durghatna’ by Amitabh Shrivastava, which has been staged many times. This organization is not limited to Jammu only but has been performing plays in other states as well.
His plays are presented in the theatre festivals held in other parts of the country. The main Hindi plays staged by Rangyug Natya Sanstha's director Deepak Kumar are- 'Aadhe Adhure', 'Ashaadh Ka Ek Din', 'Poster', 'Raktbeej', 'Ek Tha Gadha', 'Maranoparant', 'Hatya Ek Aakar Ki', 'Surya Ki Antim Kiran Se Surya Ki Pehli Kiran Tak' etc. This institution staged the French language play 'Waiting for Gaudo', which was translated into Hindi by Krishna Baldev Vaid. This theatre institution started 'Intimate Theatre' for the first time in Jammu. According to Rangyug's founder Deepak Kumar, in intimate theatre the audience is made to sit on the stage itself so that they can see every action of the theatre workers closely. In 1991, this institution staged 'Aadhe Adhure' using this system. Kumar A., director of 'Natraj Natya Kunj'. Bharti staged plays like 'Passport', 'Kabir Khada Bazaar Mein', 'Goodbye Swami', 'Insaniyat', 'Fandi' and 'Ant Haazir Ho', 'Gagan Damama Bajyo', 'Mr. Abhimanyu', 'Suraj Murta Nahi Hote' etc.

Sudhir Mahajan's group theatre organization staged plays like 'Bharat Durdasha', 'Andher Nagari', 'Dakghar', 'Good Bye Swami', 'Singhasan Khali Hai', 'Andha Yug', 'Baki Itihaas', 'Thirtieth Century', 'One hundred and one Kaurava', etc. Along with this, the organization staged Marathi 'Saiya Bhaye Kotwal' and Sanskrit plays 'Matt Vilas' and 'Mrichchhakatikam' in Hindi. Theatre Mitra has also contributed significantly in taking the theatre forward here. Under the direction of Sanjay Kapil, this organization has played 'Taj Mahal Ka Tender', 'Sakha Ram Binder', 'Raja Nanga', 'Chauraha', 'Ek Aur Ek Gyarah', 'Desh Ke Liye', 'Baadh Ka Paani', 'Rakshas', etc.

Vikram Sharma's Shivani Cultural Society successfully staged 'Mahasamar', 'Ek Aur Dronacharya', 'Baki Itihaas', 'Ant Nahin', 'Ek Sapne Ki Maut', 'Kaligulla', 'Kahaan Ho Fakir Chand', 'Mahanirvan' and the English play Othello. The efforts of all the above organizations and directors are commendable for keeping the theatre dynamic, but these organizations could not create audience for the plays.

Natarang's founder Balwant Thakur has taken Jammu's theatre out of the regional boundaries and has given it international fame, which is a matter of pride for any state. Under his direction, 'Natarang' theatre organization organises a play every Sunday under the weekly drama series in Kachi Chawni, Jammu. Every week the news of their drama performance is published in the local newspapers. It is known from that that a particular play was performed. In the theatrical performances of Natarang, only their own hired artists and the chief guest, an invited person from outside, are present in the theatrical presentation. Nowadays, information about theatrical performances is being given on social media, but this information also reaches only a few people. Such theatrical performances remain far away from the audience. There is no dearth of discerning audience here, but there is no invitation or promotion of it anywhere. In such a situation, where will the audience come from? Many organizations either give their presentations in annual festivals or get the information about the drama staged through newspapers. Those theater groups which promote the drama, a crowd of drama loving audience has also been seen at their places.

In Jammu and Kashmir, both playwrights and directors have different concepts about drama. Some senior directors believe that Hindi playwrights here lack originality and such plays which are written keeping only the reader in mind cannot meet the needs of the theatre. Famous theatre artist Balwant Thakur said in strong words in his interview, “Local plays are not of the standard, so I cannot stage superficial plays. I have to take theatrical adaptations, translated plays and plays in foreign languages.” Jaishankar Prasad’s plays were not written keeping the theatre in mind. Despite the very difficult stage arrangements, B.B. Karanth has staged many of them. After some editing, many other directors have also staged them. Therefore, how far is it right to form an opinion without any effort that Hindi drama here is of low standard. Here, directors and theatre artists are neither ready to take any meaningful initiative nor make efforts to stage original plays. As a result, the Hindi playwright here is going through a state of despair, while the situation of Hindi playwriting is not too depressing. Not all the plays are bad that they cannot be staged even after being refined.

The playwrights of Jammu and Kashmir are not as capable of thinking and discussing attractive, relevant or promising dramas as the playwrights of Hindi speaking states, but they are certainly trying to enrich the Hindi drama and theatre here and are engaged in showing their ability to express the Indian social context through their writings. These playwrights have made every possible effort to make people aware of every problem of the society like family disintegration, exploitation of women, exploitation of Dalits, the state of disintegration in relationships motivated by personal selfishness, the policies of corruption prevalent in politics and the system. A person influenced by selfishness, parents engaged in the blind race for money, the free mentality of women, the increasing suffocation and distance in married life can be seen in the plays of Dr. Sudhir Mahajan, Sutikshan Kumar Anandam and Shivdev Manhas. In these plays, an attempt has been made to explain every aspect of exploitation of women and struggle, her pain and suffering, and the many levels of taboos.

Plays like 'Safed Cheel' by Om Goswami, 'Andher Nagri Ka Zalim Garib', 'Beti Nahi Chahiye' by Dr. Sudhir Mahajan, 'Woh Jo Kho Gaya', 'Haan Pita Ji' by Suteekshan Kumar Anandam, 'Dhundh Ke Ghere', 'Mere Apne' by Rajnish Kumar Gupta have been written on the above problems. Along with the struggle of women and the pitiable condition of their lives, an attempt has also been made to make the audience aware of the ugly truth of the patriarchal society. These playwrights have brought forth the corrupt and conspiratorial form of politics and administration in the contemporary environment. Plays like 'Tairaak' by Chhatrapal, 'Raaste Aur Bhi Hain' by Varun Suthra, 'Magar Yeh Sach Hai' by Suteekshan Kumar Anandam, 'Takan Lage Kaag', 'Haan Pita Ji' etc. have exposed the institutions engaged in self-interest. Along with this, these playwrights have also highlighted the pain of Dalits, who have been marginalized in the society, and the physically and mentally abnormal people. In this context, Baljeet Raina's play 'Ek Aur Prem Katha', Rajnish Kumar Gupta's 'Kathaputliyan', 'Prashnachinh' and Varun Suthra's 'Hum Aise Kyun Hain' etc. can be seen. What I mean to say is that the themes of the plays written in Hindi here are effective, but many burning problems of the present due to which this state has been affected, are not seen in the plays. This state suffered the pain of partition and even today, after almost seventy-five years of independence, people here suffer the pain of that pain every moment, but playwrights have not noticed this. The issue of terrorism is also almost not seen in the plays,

whereas these are such problems which can prove to be more effective due to stage presentation. Mainstream Hindi drama is seen taking direct confrontation with the system to expose the inconsistencies of post-independence India, whereas the playwright of this state is backward in this respect.

In a play, the expression of stagecraft occurs twice. The expression of the playwright comes under the text structure, while the expression of the director is called stage equipment, which sometimes may differ from the expression of the playwright. If we talk about theatre, we find that the directors here are greatly influenced by the Hindi adaptations of foreign languages such as English, French, Russian, etc. Shakespeare's 'Hamlet', 'Julius Caesar', Dario Fo's 'Ek Aur Durghatna', Brecht's 'Do Kodi Ka Khel', Samuel Beckett's 'Waiting for Godot', etc. have been presented here. Apart from this, Hindi translations of Indian languages such as Kashmiri, Dogri, Punjabi, Urdu, Bengali, Marathi, etc. are also presented.

Another irony is that the directors here often ignore the plays of the playwrights and present plays in other languages which are easily available and popular. Due to this reason, their relationship with the local playwrights has not been smooth. For the creation of good, quality, stageable plays, regular, structural dialogue between theatre workers and playwrights is also a great need, which is lacking here. If such dialogue can be established between both the parties, it will help them understand each other's problems and needs. There is also a need to increase the level of play writing. There is a need for training in play writing here, which will lead to the development of Hindi drama and theatre here. Secondly, the directors of theatre institutions should also get government assistance for staging plays because there are many such theatre institutions which want to stage plays but due to weak financial condition, they are able to stage only one play in a year.

Jammu-Kashmir Academy gives some amount to the institutions for aid which is very less. Here, only 'Natarang' and 'Ekta School of Drama' are such theatre institutions which are running their institutions on 'full time repertory', i.e. they receive grants from the Government of India and remain active for theatre performances throughout the year. Whereas other institutions are not able to remain very active due to lack of government grants. The institutions do not stage many plays due to the lack of ticket system. It is also said that the audience of Jammu is not serious about drama, they will not come to watch the drama by paying money. Some directors consider the ticket system to be mandatory. They say that the drama-loving audience understands the liveliness of this genre, hence they will definitely come. If the art of drama is used correctly, then despite the technical beauty of media, the capacity of theatre will be proved automatically. We believe that the attraction of media will prove to be a lifeless experience in front of the liveliness of drama.

Interviews with many directors revealed that we do not have audiences here but I believe that in reality we have not yet been able to make a place in the hearts of the audience. Secondly, the publicity of the plays being staged here is not done on time and thirdly, even if the audience somehow comes to watch the play, the play does not start before the chief guest enters the hall, due to which the bored audience sometimes has to return without watching the play. Directors should take full care of the audience in the play presentation because the audience is not created on its own but is created.

The Hindi Department of Jammu University organized three plays 'Ek Aur Dronacharya' (2013), 'Jis Lahore Nahin Dekhya O Jamyai Nai' (2014) and 'No Man's Land' (2015) in the

General Zorawar Auditorium. The plays were directed by Ifrakaak (who is currently working as a cultural officer in the university). Around fifteen hundred spectators were present in the auditorium in each presentation. Everyone appreciated the performances. These performances have completely refuted the statement of the directors that 'there are no spectators'. In our performances, we also saw that the audience here is a serious audience. After every presentation, we were asked 'when are you organizing the next play'. Recently, the play 'Naagmandal' was performed by the students of Jammu University in which a large number of serious spectators were present. Similarly, every year the Jammu-Kashmir Art, Culture and Language Academy organizes drama festivals in which different drama institutions stage excellent plays. Therefore, the future of Hindi theatre in Jammu and Kashmir is bright.

References

1. Jitendra Sharma, Emergence and Development of Theatrical Tradition in Jammu, Hindi Shiraja, 1977, Issue: 2-3 P.38
2. Interview artist, Aiyash Arif, 2015
3. Interview artist, Balwant Thakur, 2015